International Advance Journal of Engineering, Science and Management (IAJESM)
Multidisciplinary, Indexed, Double Blind, Open Access, Peer-Reviewed, Refereed-International Journal.
SJIF Impact Factor =7.938, July-December 2024, Submitted in December 2024, ISSN -2393-8048

''पंडित दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानववाद की अवधारणा का समावेशी विकास में भूमिका एवं प्रासंगिकता''

अभिलाषा सिंह, शोधार्थिनी, राजनीति विज्ञान विभाग, दी0 द0 उ0 गोरखपुर वि0वि0, गोरखपुर

एकात्म मानववाद और समावेशी विकास के बीच गहरा सम्बन्ध है। दोनों ही अवधरणाएँ व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के सन्तुलित एवं समग्र विकास की बात करती है। समावेशी विकास में समाज में असमानता को कम करना, गरीबी हटाना, अवसरों की समानता, सामाजिक न्याय की सुनिश्चितता आदि को बढावा दिया जाता है। समावेशी विकास में समाज के सभी वर्गो को शामिल किया जाता है, जबकि एकात्म मानववाद में व्यक्ति और समाज का समग्र विकास किया जाता है। समावेशी विकास में समाज के सभी वंचित वर्गो को समाहित किया जाता है, जबकि एकात्म मानववाद में व्यक्ति जो समाज का अभिन्न अंग होते है उनको शामिल किया जाता है। समावेशी विकास में सामाजिक– आर्थिक समावेशन पर बल दिया जाता है, जबकि एकात्म मानववाद में सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और भौतिक सन्तुलन स्थापित किया जाता है। इसी प्रकार समावेशी विकास में समान अवसर और समान सामाजिक न्याय को बढ़ावा दिया जाता है जबकि एकात्म मानववाद धर्म आधारित कर्तव्य निर्भर समाज व्यवस्था के निर्माण पर बल प्रदान किया जाता है। अतः समावेशी विकास में समतामूलक समाज के निर्माण पर बल देकर सन्तुलित, समरस और नैतिक समाज का निर्माण किया जा सकता है। समरसता और समता दोनों ही विचारधाराएँ समाज में भेदभाव नहीं चाहती है। एकात्म मानववाद की समावेशी विकास की विचारधारा मानव केन्द्रित दृष्टिकोण अपना कर मानव कल्याण हेतु तत्पर रहती है। जिससे समाज के हर व्यक्ति में सामाजिक उत्तरदायित्व का विकास हो सके। एकात्म मानववाद स्थानीयता और संस्कृति को स्थानीय आवाश्यकताओं के अनुसार बढ़ाया जा सकता है। भारत की वैदिक परम्परा आध्यात्मिकता से पूर्णतः प्रभावित है, जो समाज की समता व राष्ट्रीय समृद्धि का परिचायक है। भूमि तथा जनजीवन का भावात्मक तादात्म वैदिक काल से ही भारत में परिलक्षित दिखाई देता है। अर्थात् दान, यज्ञ, गौपालन, कृषि व अर्थव्यवस्था की तत्कालीन सामाजिक जीवन की समताप समरसता के रुप में समावेशी विकास दिखाई देता है। चूँकि भारतीय वैदिक विचारधारा ब्रह्मवाद से परिपूर्ण है। जो मनुष्य को ब्रह्म के साक्षात्कार हेतु प्रेरित करने का अवसर प्रदान करती है तथा वनस्पति व प्रकृति के प्रति पूज्य भाव रखने वाली भी है, साथ ही मानवता का पूर्ण पाठ पढ़ाने वाली जागृत मनोवृत्तियों को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से समावेशी विकास प्रदान करती है। जो मनुष्य प्रत्येक क्षण, नेति नेति कहते हुए मानव को नवीन अनुसंधान खोज के लिए प्रोत्साहित करती है। ज्ञान को हमेशा जागृत करने का मार्ग प्रशस्त करती है। भारतीय वैदिक विचार में उपनिषद् तथा कर्मकाण्ड की प्रधानता है, जिसमें ब्रह्म एक अलौकिक स्थान है। यही ब्रह्म चराचर जीवन–जगत प्रकृति, मनुष्य और समाज में तर्कयुक्त सम्बन्ध बनाता है। जिसके मूल शाखा में भारत की मूल धरोहर, वेद, पुराण, उपनिषद्, वैदिक शास्त्र, सभी कालान्तर में किसी न किसी रुप में एकात्म मानववाद को परिपूर्ति करते है। पं0 दीनदयाल उपाध्याय ने अपने लगभग दो दशकों के खोज व अनुभव के आधार पर चिन्तन करते हुए 'एकात्म मानववाद' के नाम से भारतीय जनसंघ की सैद्धान्तिक नीति से पूर्णाहुत एक समावेशी विचारधारा का प्रार्दुभाव किया। उन्होंने अपने सिद्धान्त एकात्म मानववाद का सृजन शंकराचार्य से प्रभावित होकर किया है। आदि शंकराचार्य जो कि अद्वैतवादी विचारक एवं चिन्तक थे, जिन्होंने भारत के उन्नयन हेतु चारों दिशाओं में अद्वैतवादी मठ का निर्माण किया और मानवता की एक नई सच्ची साधना के स्वरूप को स्थापित किया था। पं0 दीनदयाल जी कहते हैं कि आज भारत के इतिहास में क्रान्ति लाने वाले दो पुरुषों की याद आती है। एक वह है कि जब **जगतगुरु शंकराचार्य** सनातन बौद्धिक धर्म का संदेश लेकर देश में व्याप्त अनाचार समाप्त करने चले थे और दूसरा वह है कि जब अर्थशास्त्र अवधारणा का उत्तरदायित्व लेकर संघ राज्यों में विभाजित राष्ट्रीय शक्ति को संगठित कर समावेशी साम्राज्य की स्थापना करने **चाणक्य** चले थे। आज एकात्म मानवतावाद के प्रारूप को प्रस्तुत करते समय वैसे महत्वपूर्ण प्रसंग का ख्याल आया है। जब विदेशी धारणाओं के प्रतिबिम्ब पर आधारित समस्त मानवों से सम्बन्धित अधूरे व अपुष्ट विचारों के मुकाबले विशुद्ध भारतीय विचारों पर आधारित मानव कल्याण का सम्पूर्ण विचार 'एकात्म मानववाद' के रुप में उसी सुपुष्ट भारतीय दृष्टिकोण को नये सिरे से सूत्रबद्ध करने का काम हम प्रारम्भ कर रहे हैं। अतः पं0 दीनदयाल उपाध्याय ने आदि **जगतगुरु शंकराचार्य** और **आचार्य चाणक्य** के विचार सिद्धान्त से प्रभावित होकर भारत के समन्वित और समावेशी विकास के लिए एकात्म मानववाद की स्थापना किया। इस तरह से पं. दीनदयाल उपाध्याय ने भारतीय विचार परम्परा में शंकर का वेदान्त और कौटिल्य का अर्थशास्त्र तथा आत्म गठित विचारधारा एकात्म मानववाद की एक नव **'प्रस्थानत्रयी'** की स्थापना किया। इसके साथ ही साथ पं0 दीनदयाल उपाध्याय जी के अनुभव

चिन्तन में विभिन्न महापुरुषों के ज्ञान प्रवाह भी सम्मिलित हुए हैं जैसे स्वामी विवेकानन्द, तिलक, अरविन्द, कबीरदास, संत तुकाराम आदि के विचारों को एकात्म भाव से समाज, राष्ट्र को एकात्म के सूत्र में स्थापित करने का काम किया गया हैं। पं0 दीनदयाल उपाध्याय जी एकात्म मानववाद को स्पष्ट करने के लिए इसके विग्रह भाव स्पष्ट करते है कि– एकात्मता से तात्पर्य है, **'यत्र् पिण्डे तत्र ब्रह्माण्डे'** के आधार पर समाज सृष्टि का निर्माण हुआ है। अर्थात् जो पिण्ड में विराजमान है वही 'ब्रह्माण्ड' में स्थित है। जो कि विश्व में प्रचलित यह भारतीयता की पहचान है । अंश और सम्पूर्ण मूलतः एक है। इसी मूल तत्व के आधार में 'एकत्व' (अद्वैत) दर्शन का निर्माण हुआ । अर्थात अंश एवं संपूर्ण तत्व एक है, यह इस दार्शनिक तत्व की निष्पत्ति है। इसमें से 'एकत्व' अथवा 'अद्वैत' के दर्शन का प्रचलन हुआ। सम्पूर्ण चराचर जगत् में एकात्म भाव की अवधारणा भारतीय दर्शन की विशेषता है। अतः जो क्षुद्र में है, वही विराट में भी है। इस व्याख्या के अनुसार 'विराट' अनेक छोटी इकाईयों का योग नहीं है और 'सूक्ष्म' विराट का छोटा टुकड़ा न होकर उसका लघु 'चित्त' है। वट वृक्ष विराट है, बीज सूक्ष्म है। बीज में वृक्ष अपनी सम्पूर्ण विशालता समाया हुआ है और सूक्ष्म बीज विराट, व्यष्टि एवं समष्टि तथा मनुष्य एवं समाज में द्वन्द्व नहीं है। एकात्म भाव है, जो जीवन को टुकड़ों में नहीं बांटता। यह खण्ड दृष्टि नहीं, अपितु समग्र दृष्टि प्रदान करता है। भारतीय जनसंघ का मुख्य उद्देश्य "भारत को उसकी संस्कृति और मर्यादा के आधार पर एक राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक जनतंत्र बनाना है जिसमें व्यक्ति को समान अवसर और स्वतंत्रता प्राप्त हो तथा जो भारत को सुदृढ़ एवं सुसम्पन्न बनाते हुए उसे एक प्रगतिशील, आधुनिक और जागरुक और समावेशी राष्ट्र का निर्माण कर सके, जो दूसरे किसी राष्ट्र का सफलतापूर्वक सामना करने में सक्षम रहे और विश्व शान्ति की स्थापनार्थ राष्ट्र संघ में समुचित रीति से प्रभाव डाल सके। पं0 दीनदयाल उपाध्याय 'एकात्मवाद' को विश्लेषित करते हुए कहते हैं कि भारत भूमि की जो आत्मीय संस्कृति, सभ्यता लिए हुए है, वह एकात्मवादी हैं, वह भारत ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व जो विविध सत्ताओं तथा जीवन के विविध एकात्मवादी अंगों के दृश्य में भेद को स्वीकार करते हुए उनमें एकात्म का तत्व विराजित दिखाई देता है, अलग होते हुए भी एक है। भारतीय सांस्कृतिक परम्परा के तत्वों में प्राचीन भारत में जहाँ जाति, धर्म, परम्परा, रीति–रिवाज, कर्म भेद है, लेकिन प्रत्येक में एकात्म भाव स्पष्ट रुप से दिखाई देता है। उदाहरणार्थ जैसे भारतीय संस्कृति में एक ईकाई है जजमानी व्यवस्था। विदेशी विद्वान **विलियम वाइजर** ने जजमानी व्यवस्था का अध्ययन किया और कहा कि भारत में चार जातियाँ हैं– ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। ये चारों जातियां एक दूसरे को प्रभावित करती है और मूल्य परम्परा के अनुसार सबके अपने–अपने कर्म क्षेत्र हैं। जजमानी व्यवस्था में सेवा भाव की परम्परा होती है। जिसमें एक जाति के लोग अर्थात् नाई, धोबी, कहार, मुसहर, उपजाति के लोग हैं वे अपने यजमान के यहाँ आश्रित रहते हैं तथा वस्तु विनिमय के आधार पर एक दूसरे की सेवा करते हैं। **विलियम वाइजर** के अनुसार – इस प्रथा के अन्तर्गत प्रत्येक जाति का कोई निश्चित कार्य पीढ़ी दर पीढ़ी चलता रहता है। इस कार्य पर उसका एकाधिकार होता है। जिसमें एक जाति दूसरे जाति की आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। उक्त तथ्यों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि भारत मे जजमानी व्यवस्था एक–दूसरे को एकात्म मनोभाव के आधार पर मानवतावादी बीज का रोपण करता है और एकात्म भाव जागृत होता है। इसी तरह से भिन्न–भिन्न संस्कृति आवरण नियम, भारतीयता की पहचान है जो एकात्म बना कर समावेश को बढावा देती है। अतः स्वयं पं. दीनदयाल उपाध्याय ने स्पष्ट किया है कि भारतीय लोक परम्परा एकात्म मानववाद का पूर्ण भण्डार है। भारत एक एकात्म मानववादी राष्ट्र है जिसकी तुलना किसी अन्य समाज से करना ठीक नहीं है। जिसकी पहचान समावेशी है। उन्होंने ने एकात्म मानववाद को एक प्रत्यक्ष जीवन का समावेशी दर्शन कहा है, जिसका मानव के दैनिक दिनचर्या में आचार–विचार का पूर्णतः प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। इसलिए एकात्म मानव धर्म मनुष्य के समस्त समन्वित प्रगति तथा समावेशी विकास को सम्पूर्ण सृष्टि धर्म, परमेष्टि धर्म के आधार पर सुस्पष्टता के साथ एक कर्तव्यपूर्ण रुप से सहयोग भाव प्रकट करता है। इसका कारण मुख्यतः स्वार्थ निरपेक्ष वृत्ति से व्यक्तिगत तथा समष्टिगत कर्म है। जिसमें मानव के चारों पुरुषार्थ धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को अपने नैतिक जीवन दृष्टि में अपना कर मानवता को जागृत रखना है। यही धर्म व्यक्तिगत व्यवहार को सामुदायिक, सामाजिक मानवता को समावेशी रूप में पुष्पित एवं पल्लवित करती है। समावेशी दर्शन जिसका उन्नयन मानव को उनके बोध ज्ञान को जागृत करके संस्कारों के आधार पर मानव को एक स्थिर पद प्राप्त कर सकता है। पं0 दीनदयाल उपाध्याय ने अपने एकात्म मानव दर्शन में सम्यक धर्म, सम्यक संस्कार, सम्यक राष्ट्र एवं सम्यक् एकात्म भाव को समावेशी दर्शन के साथ बड़े ही सारगर्भित रुप से समाहित किया हैं। वह जिस एकात्म दर्शन में समावेशी दर्शन की बात करते हैं उसमें प्राथमिक संस्थाओं जैसे परिवार, शिक्षा, सांस्कृतिक क्षेत्र, सामाजिक, आर्थिक, नैतिक और धार्मिक, मन्दिर, संत, महात्मा और

सत्पुरुषों के समागम इनके चारित्रिक श्रवण–बोधत्व प्रवचन इत्यादि यह सभी मानवता के जगत सागर को चरित्रवान, पौरुषत्व तथा संस्कारवान बनाती है। यह सब संस्कार के केन्द्र बिन्दु के रूप में स्थापित है, क्योंकि इन्हीं को भारतीय अस्मिता तथा गरिमा को आधार बनाते हैं। उनके समावेशी विकास को परिणित करने का उद्देश्य यह था कि एकात्म मानववाद केवल राजनैतिक एवं आर्थिक सिद्धान्त नहीं, है वरन् यह समावेशी और समग्र दर्शन है, जो मानव, समाज और राष्ट्र तथा प्रकृति के बीच सन्तुलित रूप में कर्तव्योन्मुख बनाती है। उन्होंने इन्हीं समावेशी दर्शन के आलोक में कहा है कि समावेशी विकास केवल भौतिक नहीं हो सकता है, इसमें यह जरुरी है कि शरीर, मन, बुद्धि, और आत्मा को शामिल किया जाएगा। विकास का अनियमित होना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है, इसकी कार्यक्षमता का प्रतिशत कम या अधिक हो सकता है। इसी को प्रबल और क्षमता का विकास करने के लिए पं0 दीनदयाल उपाध्याय ने एकात्म मानव दर्शन को एक समावेशी आधार बनाया और मानवता के विकास के लिए एक प्रयोगशाला में निर्मित किया ताकि एकात्म मानव दर्शन के बोध स्पर्श से पुनः चैतन्य बनाकर तथा युग धर्म को उसके अनुरुप परिवर्तित करके मानवता रूपी शक्ति क्षमता को पुनः स्थापित करते हुए समावेशी विकास किया जा सके। चूँकि वे कहते हैं कि एकात्म मानववाद दर्शन समावेशी दर्शन जीवन दर्शन है। अतः समाज व्यवस्था के इन सभी सामाजिक घटकों के आधार पर एकात्म दर्शन के समस्त अंगों से संस्कारित करते हुए भौतिकता के जीवन के उद्भव के साथ–साथ राजनीति, अर्थनीति, सामाजिक जीवन के समस्त पहलुओं के आधार पर मानवता का एकात्म भावना को पुष्पित किया जाना चाहिए ताकि सभी का समावेशी विकास किया जा सके। पं0 दीनदयाल उपाध्याय ने कहा है कि एकात्म मानव दर्शन वस्तुतः केवल सर्वोषाम विरोधेन नहीं है बल्कि परस्पर सहयोग और समावेशी विकास के परम्परागत रुप से अनुकूल करने वाला दर्शन है। वह आगे कहते हैं कि समाज में होने वाला किसी प्रकार का संघर्ष अपरिहार्य विनाश का कारक होगा। **दत्तोपंत ठेंगडी** जी ने अपने एक भाषण में एकात्म मानववाद को स्पष्ट करते हुए कहते हैं–''इसका नाम वाद या 'इज्म' क्यों रखा गया? वैसे पण्डित जी स्वयं वाद के पक्षपाती कभी नहीं थे। उनका मत था कि जो सत्य और सनातन है, वह न तो वाद के चौखटे में ठीक बैठेगा और न बदलती हुई परिस्थितियों में बदल सकेगा। किन्तु आज कुछ लोगों की आंकलन की शक्ति की भी एक सुनिश्चित पद्धति बन गई है और वह पद्धति 'वाद' अथवा 'इज्म' की है। अतः सर्वसाधारण की सुविधा के लिए ही 'वाद' अथवा 'इज्म' शब्द का प्रयोग उन्होंने किया। पं0 दीनदयाल उपाध्याय अपने एकात्म मानववादी सिद्धान्त नीति को मानव के जीवन दर्शन के रुप में विश्लेषित कर एक संरचनात्मक स्वरुप प्रदान करते हैं और मानव जीवन को एक सूत्र का स्वरुप प्रदान करते हैं। उन्होंने मानव की व्यष्टि परमेष्टि तथा चतुर्षुरुषार्थों के आधार पर समाज में रह रहे व्यक्ति के सामुदायिक समष्टियों के आधार पर तथा उनके बीच (व्यक्ति और समाज) परस्पर सम्बन्धात्मक गतिविधियों को अपने अवधारणा का आधार बिन्दु बनाया। उन्होंने स्पष्ट किया कि पश्चिमी समाजों में सम्पूर्ण संख्यात्मक ईकाईयों का स्वरुप भिन्न–भिन्न होते हैं जिसमें व्यक्ति, समाज, परिवार, समुदाय, राष्ट्र तथा मानवता का स्वरुप पूर्ण रुप से झलकता है। इस संदर्भ में दन्तोपंत ठेंगड़ी कहते हैं– ''पश्चिम में सभी इकाईयों, संस्थाओं एवं कल्पनाओं का विचार पृथक–पृथक आधार पर किया गया है। व्यक्ति का व्यक्ति के नाते, परिवार का परिवार के नाते, समाज का समाज के नाते और मानवता का मानवता के नाते वहाँ विचार किया गया। किन्तु इन समस्त इकाईयों में कुछ सम्बन्ध है इसका विचार नहीं किया गया है। व्यक्ति का विचार करते समय अन्य सामाजिक अवयवों को भुला दिया गया।'' यही बात परिवार, समाज और मानवता का विश्लेषण करते समय हुई, उनके यहाँ एक–एक इकाई का विचार हुआ । समझने के लिए कहा जा सकता है कि बीच में एक बिन्दु है, जो व्यक्ति है। उसको आवृत्त करने वाला उससे बड़ा घेरा परिवार है। उसको आवृत्त करने वाला किन्तु पिछले घेरे से असम्बद्ध एक दूसरा बड़ा घेरा समुदाय का है। उसको आवृत्त करने वाला, उससे बड़ा घेरा राष्ट्र का है और उससे ऊपर जो घेरा है वह मानवता का है। यहाँ तक वे लोग पहुँच गये हैं, यह रचना संकेन्द्रीय है, इसमें व्यक्ति या मानव केन्द्र बिन्दु है। अब उससे सम्बन्ध न रखते हुए अन्य में परिवार, समुदाय, राष्ट्र और मानवता के हैं। ये एक दूसरे को आवृत्त अवश्य करते हैं पर एक दूसरे से अलग हैं और एक–दूसरे के निर्गमित नहीं होते हैं। अपने यहाँ जो रचना दी गई है, वह सनातन रचना है और नवीन नहीं है। इसे कुण्डलित, समर्पित या उत्तरोत्तर वृद्धि करने वाली अखण्ड मण्डलकार रचना कहा जाता है, इसका भी प्रारम्भ व्यक्ति से होता है और व्यक्ति को लेकर, व्यक्ति से सम्बन्ध न तोड़ते हुए, उसी से सम्बन्ध कायम रखते हुए अगला घेरा परिवार का है। उसे खण्डित न करते हुए उसी से सम्बद्ध दूसरा घेरा राष्ट्र का है। सातत्य रुप में उससे ऊपर का घेरा मानवता का है और चरम शिखर पर चराचर विश्व का घेरा है। उपरोक्त तथ्यों के आधार पर दन्तोपंत ठेंगडी संकेन्द्री रचना और अखण्ड मण्डलाकार दो रचनाओं में क्या भिन्नता

अथवा अन्तर है, उसको समझाते हुए स्पष्ट करते हैं कि चूँकि जो पश्चिमी वैचारिकी चिन्तन है वह व्यक्ति के सामुदायिक जो ईकाईया हैं वह तो एक दूसरे आवृत्त है परन्तु पारस्परिक रूप से क्रमबद्ध जुड़े नहीं होते हैं। जिसके कारण उनके चिन्तन में एकान्तिक परिदृश्य दिखाई पड़ता है। इस प्रकार के विचारधारा में व्यक्तिवाद, अहित कृत्य होने की संभावना तीव्र होती है। वहीं भारतीय सांस्कृतिक मनीषा का आवृत्ति और प्रवृत्ति दोनों समाज और व्यक्ति के बारे में सम्बन्धात्मक रुप से पारस्परिक हित भावना का चिन्तन दिखाई पड़ता है। समन्वय और हित पूर्णतः व्याप्त रहता है। सर्वजन हिताय का चिन्तन भाव होता है यहाँ व्यक्तिगत भावना दूर–दूर तक दिखाई नहीं पड़ती है। व्यक्ति का विकास सम्पूर्ण मानवता के लिए होता है जिसमें मानवता और व्यक्ति के परस्पर हित के लिए होता है संघर्ष के लिए कदाचित नहीं होता है।

शोध निष्कर्ष

एकात्म मानववाद (Integral Humanism) एक समावेशी विचारधारा है, जिसकी रचना पं0 दीनदयाल उपाध्याय ने की थी। यह विचारधारा भारतीय संस्कृति, परम्परा और सामाजिक मूल्यों के अनुरूप एक ऐसा आयाम प्रस्तुत करती है जो समग्र और समावेशी विकास को केन्द्र में रखकर समाज के सम्पूर्ण विकास की रूपरेखा निर्मित करती है। समावेशी विकास का अर्थ है एक ऐसा विकास जिसमें समाज के सभी वर्गो, विशेषरूप से वंचित, पिछड़ें, और गरीब लोगों को समान अवसर और सहभागिता प्राप्त हो सके। पं0 दीन दयाल उपाध्याय ने अपने एकात्म मानवतावादी दर्शन सें समावेशी विकास में व्यक्ति, समाज और प्रकृति का समन्वित सन्तुलन बनाने की वकालत की है। एकात्मक मानववाद व्यक्ति, समाज और प्रकृति के बीच एकाम्तकता अपनाने पर बल प्रदान करता है। पं0 दीन दयाल उपाध्याय जी का मानना था कि विकास का वास्तविक तात्पर्य केवल आर्थिक दृष्टि से न होकर मानसिक, बौद्धिक, आध्यात्मिक ओर सामाजिक दृष्टिकोण से भी होना चाहिए। इस प्रकार के सन्तुलन से सभी वर्गो को समान रूप से लाभ प्राप्त होता है। इसीलिए एकात्मक मानवतावाद में अंत्योदय का सिद्धान्त समाहित किया गया है। अर्थात समाज के अन्तिम व्यक्ति का कल्याण। समाज के अन्तिम व्यक्ति के कल्याण को प्राथमिकता देना तभी सम्भव हो सकता है जब सरकार अन्तिम पंक्ति में बैठे व्यक्ति के हित वर्धन को ध्यान में रखकर नीतियों का निर्माण करे। तभी समावेशी विकास को स्वाभाविक रूप से सुनिश्चित किया जा सकता है। समावेशी विकास की विचारधारा स्थानीय संसाधनों, स्थानीय आवश्यकताओं और सांस्कृतिक मूल्यों के अनुसार विकास की बात करती है। इससे यह सुनिश्चित होता है कि विकास किसी खास वर्ग तक सीमित न रहकर सभी तक पहुँचे। इस प्रकार सपष्ट होता है कि मानवीय मूल्यों पर आधारित अर्थव्यवस्था ही समावेशी विकास की अवधारणा को प्रेरित करती है। एकात्म मानववाद भोगवादी संस्कृति के स्थान पर जरूरत आधारित उपभोग को प्रोत्साहित करता है। इससे संसाधनों का न्यायपूर्ण वितरण होता है, और आर्थिक विषमता कम होती है। समावेशी विकास का सामाजिक समरसता और समानता से गहरा नाता पाया जाता है। एकात्म मानववाद की समावेशी विकास विचारधारा में जाति, धर्म, भाषा, या वर्ग के आधार पर भेदभाव को अस्वीकार किया गया है। यह सामाजिक समरस्ता और सहयोग की भावना को बढावा देता है जो समावेशी समाज की नींव मानी जाती है। एकात्म मानववाद की समावेशी विचारधारा सामूहिक सहभागिता पर बल प्रदान करती है। साथ ही सबका साथ और सबका विकास की भावना को महत्व देता है। इससे सभी वर्गो को विकास प्रक्रिया में भाग लेने का अवसर मिल जाता है। एकात्म मानववाद एक दार्शनिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण है जो समावेशी विकास को एक गहरे स्तर पर आधार प्रदान करता है। समावेशी विकास इसके व्यावहारिक रूप की तरह है, जबकि एकात्म मानववाद उसका मूल दर्शन है। यदि समावेशी विकास को कैसे करना है, माने तो एकात्म मानववाद यह बताता है कि क्यों और किन मूल्यों के साथ करना है। इस प्रकार एकात्म मानववाद, समावेशी विकास के लिए एक नैतिक और व्यवहारिक मार्गदर्शन प्रदान करता है। साथ ही एक एंसी सोच को बढ़ावा देती है जो केवल सकल घरेलू उत्पाद या औद्योगिक विकास तक सीमित नहीं है, बल्कि हर व्यक्ति की गरिमा, जरूरत और समाज की समग्र उन्नति को प्राथमिकता देता है। इसलिए आज के सामाजिक– आर्थिक परिप्रेक्ष्य में एकात्म मानववाद की प्रासंगिकता और भी बढ़ गयी है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. बौद्धिक वर्ग पंजिका, दिल्ली 18 जून 1962, पृ0सं0 158–160.
2. संस्कृति नैमिशेग्र : संसकृति गंगा न्यास, कौटिल्य मार्ग, नई दिल्ली, पृ0सं0 76–77
3. शर्मा, डॉ0 महेशचन्द्र, पं0 दीनदयाल उपाध्याय कर्तत्व एवं विचार, 2017ई0 प्रभात पेपर बैक्स, नई दिल्ली, पृ0सं0 319–320.

4. दुबे, डॉ0 राकेश : एकात्म मानववादी शिक्षा दर्शन, 1st ed 2018 ई0 विद्या भारती संस्कृति शिक्षा संस्थान, संस्कृति भवन, कुरूक्षेत्र, पृ0सं0 108–109.
5. डॉ0 शर्मा महेशचन्द्र, दीनदयाल उपाध्याय (कर्तृत्व एवं विचार) एकात्म मानववाद प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0सं0 327–328.
6. एकात्म दर्शन, दीनदयाल शोध संस्थान, नई दिल्ली, अध्याय–2, राष्ट्रवाद की सही कल्पना, पृ0सं0 17–19.
7. उपाध्याय, दीनदयाल : राष्ट्र जीवन की दिशा, सम्पादक : रमाशंकर अग्निहोत्री, भानुप्रताप शुकल, 4th ed 2015 ई0 लोकहित प्रकाशन लखनऊ, पृ0सं0 38–40.
8. शर्मा, डॉ0 महेशचन्द्र, पं0 दीनदयाल उपाध्याय कर्तृत्व एवं विचार, 2017 ई0, प्रभात पेपर बैक्स, नई दिल्ली, पृ0सं0 330–333.
9. डॉ0 प्रयाग नारायण त्रिपाठी : महात्मा गाँधी और पं0 दीनदयाल उपाध्याय के जीवन दर्शन में साम्य 1st ed 2013 ई0, लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, पृ0सं0 54–56.
10. बौद्धिक वर्ग पंजिका, दिल्ली 18 जून 1962, पृ0सं0 147–149.
11. नेने विनायक वासुदेव, पं0 दीनदयाल उपाध्याय, विचार–दर्शन (खण्ड–2) एकात्म मानवदर्शन, 3rd ed 2014bZ0, सुरूचि प्रकाशन झण्डेवाला, नई दिल्ली, पृ0सं0 34–36.
12. दीनदयाल गुरूजी ठेंगड़ी, एकात्म दर्शन, दीनदयाल शोध संस्थान, नई दिल्ली, पृ0सं0 168–169.